16

सामाजिक स्तरीकरण

इस पाठ में आप मनुष्यों में पायी जाने वाली गैर बराबरी के बारे में अध्ययन करेंगे। अब तब आपने यह सीखा है कि मनुष्य समाजों में श्रम विभाजन सार्वभौमिक होता है। ऐसे समाज भी हैं, जिनमें विशिष्टीकरण और जटिलता का अभाव होता है। जैसे कि खाद्य संग्राहक और शिकारी समाजों में भी कुछ कार्य लिंग और उम्र के हिसाब से निधारित होते हैं। स्त्रियां जिस कार्य को करती हैं वे पुरुषों से भिन्न होती हैं। इसी प्रकार जो काम एक आयु समूह को दिया जाता है, वह दूसरे आयु समूह से भिन्न होता है। जिन कामों को समाज में लोग करते हैं, उनके पूरक कार्य दूसरे लोग करते हैं। यह इसलिए है कि लोग जो कार्य करते हैं, वह कार्य उनकी पहचान और जीवन पद्धति बन जाते हैं। उदाहरण के लिए, एक खाती का मकान लकड़ी के काम की कार्यशाला बन जाता है। एक जुलाहे के घर में जो करघे होते हैं, यही उसकी पहचान है।

अर्थात् इस पाठ का पहला सबक यह है कि कोई भी समाज पूरी तरह से सजातीय नहीं होता जिसमें समूह एक जैसे नहीं दिखाई देते जैसे कि व्यक्ति दिखाई देते हैं। सच्चाई यह है कि समाज में आप जो पाते हैं वह अन्तर है। स्त्री का कार्य पुरुष से भिन्न होता है। विभिन्न आयु वर्ग के लोग विभिन्न कार्य करते हैं। एक गोत्र के लोग दूसरे गोत्र से भिन्न होते हैं और इसके कारण प्रत्येक गोत्र का एक विशेष टोटम से सम्बन्ध होता है। एक जाति दूसरी जाति से अपने व्यवसाय में भिन्न होती है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप:

- सामाजिक स्तरीकरण की अवधारणा को परिभाषित कर सकेंगे;
- स्तरीकरण के केन्द्रीय विचारों का विवरण दे सकेंगे;
- इस बात को बता सकेंगे कि प्रतिष्ठा क्या है और इसके प्रकार कौन से हैं; और
- जाति-व्यवस्था का वर्णन कर सकेंगे।

16.1 अन्तर और गैर बराबरी

व्यक्तियों और समूहों में अन्तर होना एक सार्वभौमिक लक्षण है। इसका यह तात्पर्य है कि एक समूह या व्यक्ति दूसरे से ऊंचा है या यह अर्थ नहीं है कि एक के पास विशेषाधिकार हैं और दूसरे के पास नहीं। अन्य शब्दों में, व्यक्ति और समूह में होने वाले अन्तर का आशय एक का दूसरे से गैर बराबर होना नहीं है। अन्तर यह है कि दोनों में विभेद है। स्पष्ट है कि इन दोनों में जो अन्तर दिखायी देता है, वह गैर बराबरी का अन्तर नहीं है।

हमारा पहला बिन्दु यह है कि हमें अन्तर के विचार को गैर बराबरी की दृष्टि से देखना चाहिए। अन्तर से हमारा तात्पर्य यह है कि इन दोनों इकाइयों जिनका हम विचार कर रहे हैं (व्यक्ति या समूह) में कुछ गैर बराबरी या असमानताएं हैं लेकिन ये असमानताएं पूरक हैं। आदमी और औरत अपनी जैविकीय संरचना में भिन्न हैं लेकिन इनमें जो पूरकता है वही प्रजनन का कारण है। जुलाहे खातियों से भिन्न हैं लेकिन जिन वस्तुओं को वे पैदा करते हैं उनमें वे एक दूसरे पर निर्भर हैं। जुलाहे अपने लकड़ी के काम के लिए खाती पर निर्भर हैं और खाती अपनी शॉल और गद्दे जुलाहों से खरीदते हैं।

गैर बराबरी से हमारा तात्पर्य विशेषाधिकारों और स्रोतों को बांटने से है। इसका परिणाम यह होता है कि कुछ व्यक्तियों का स्थान समाज में विशिष्ट या उच्च होता है अर्थात् कुछ लोगों का स्रोतों पर अधिक नियंत्रण होता है और कुछ का कम। स्रोतों पर नियंत्रण के कारण लोगों या समूह का श्रेणियों में बंट जाना होता है।

समाजशास्त्री लोगों में प्राकृतिक गैर बराबरी ओर उनके अस्तित्व की दशाओं की गैर बराबरी में भी अन्तर होता है। पहली प्रकार की गैर बराबरी को भौतिक गैर बराबरी भी कहते हैं। इस गैर बराबरी का मतलब है उम्र, स्वास्थ्य, शारीरिक ताकत, तथा मस्तिष्क की विशेषताएं। सामाजिक गैर बराबरी की तुलना में भौतिक गैर बराबरी थोड़ी

है। समाजशास्त्री का सरोकार सामाजिक गैर बराबरी के अध्ययन से है। प्राकृतिक गैर बराबरी व्यक्ति के कार्य सम्पादन को प्रभावित करती है। एक ही सामाजिक श्रेणी में व्यक्ति के जो अन्तर होते हैं उसके कुछ खास कारक होते हैं। लेकिन सामाजिक गैर बराबरी का सिद्धान्त भौतिक गैर बराबरी पर स्थापित है।

सैद्धान्तिक रूप से दो तत्वों में जो अन्तर होता है उसका कारण असमानता नहीं है। लेकिन इसके विपरीत जो है वह भी सही नहीं है। गैर-बराबरी का जो अस्तित्व है, इसका यह मतलब नहीं है कि इन तथ्यों के बीच में अन्तर है और यह अन्तर गैर बराबरी का आधार नहीं बनाता। इसका मतलब यह हुआ है कि अन्तर और गैर-बराबरी विभिन्न वस्तुओं के साथ है। वास्तविकता यह है कि ये दोनों वस्तुएं पारस्परिक रूप से जुड़ी हुई हैं तथा एक दूसरे के पूरक हैं।

वस्तुओं में जो अन्तर होता है, इसका कारण वस्तुओं के साथ जुड़े हुए मूल्य और समाज में उनकी असमान स्थिति है। हमने पहले कहा है कि पुरुष और स्त्री भिन्न हैं और ये एक दूसरे के पूरक हैं। ऐसा होने पर भी इनको श्रेणियों में रखा जाता है। कुछ समाजों में स्त्रियों की स्थिति पुरुषों की तुलना में अधीनस्थ की होती है। कभी-कभी यह बात मातृवंशीय समाजों पर भी लागू होती है, जहां पुरुष महत्वपूर्ण फैसले करते हैं, जबकि मातृवंसीय परिवार में सम्पत्ति पिता (पुरुष) को नहीं मिलती। इसी तरह भारत के गावों में खाती और जुलाहों की स्थिति को पूरक मानते हैं। समाजशास्त्री कहते हैं कि इस तरह की गैर-बराबरी सार्वभौमिक है।

16.2 स्तरीकरण की अवधारणा

सामाजिक स्तरीकरण की अवधारणा समाजशास्त्र में 1940 के दशक में आयी। वास्तव में स्तरीकरण की अवधारणा भू-विज्ञान से ली गयी है। भू-वैज्ञानिक कहते हैं कि यह पृथ्वी कई परतों से बनी हुई है और एक परत दूसरी पतर पर पड़ी रहती है। प्रत्येक परत की स्वयं की बनावट होती है और एक परत दूसरी परत से भिन्न होती है। तकनीकी शब्दों में प्रत्येक परत स्तर कहलाती है तथा बहुत से स्तर मिल जाते हैं तब इसे स्तरीकरण कहते हैं। इस तरह पृथ्वी की बनावट स्तरीकरण कहलाती है।

पृथ्वी की संरचना की तरह समाजशास्त्री भी सोचते हैं कि मानव समाज में कई स्तर हैं और एक स्तर पर दूसरा स्तर होता है। सामाजिक स्तरीकरण की परिभाषा इसलिए इस तरह दी जाती है कि यह समाज के स्तरों का विभाजन है। लेकिन पृथ्वी के स्तरीकरण की तुलना समाजशास्त्रीय स्तरीकरण के पद से भिन्न होती है। भू-वैज्ञानिकों के अनुसार, पृथ्वी के जो स्तर हैं वे एक समान हैं । पृथ्वी के स्तरों में किसी एक स्तर

Notes

का विशेषाधिकार नहीं होता। इसकी तुलना में समाज के स्तर श्रेणियों में रखे जाते हैं यानी ये स्तर एक समान नहीं होते। सामाजिक स्तरीकरण में जिनका स्थान उच्च होता है उन्हें विशेष अधिकार प्राप्त होते हैं और निम्न स्थान वालों को नीचे स्तर पर रखा जाता है।

चित्र: मानव समाज में विशेषाधिकारों का असमान बंटवारा होता है।

इस तथ्य को हम उदाहरण द्वारा समझा सकते हैं। धनवान लोग गरीब लोगों की तुलना में अपने बच्चों को महंगी शिक्षा दे सकते हैं। वे आरामदायक वस्तुओं जैसे कि एयर कंडिशनर, रेफ्रीजिरेटर, कार, महंगे मकानों व बस्तियों में रहते हैं। ग्राम पंचायत के सदस्य जिन फैसलों को करते हैं उन्हें दूसरे लोग बिना किसी प्रश्न के स्वीकार कर लेते हैं। एक ऐसा समाज जो जातियों में बंटा होता है जैसे कि दक्षिण भारत के गांवों में निम्न जाति के लोग दिन में भी घर से बाहर नहीं निकल सकते थे, उनकी छाया भी दूसरों को अपवित्र कर देती थी। इस भांति उन लोगों के लिए रात ही सब कुछ थी। यह विश्वास था कि निम्न जातियां स्थायी रूप से अपवित्रता लाने वाली होती थीं।

ऊपर हमने जिन दृष्टान्तों को दिया है उनसे ज्ञात होता है कि लोगों के पास जो विशेषाधिकार होते हैं, वे इसके प्रमाण हैं कि लोगों में शक्ति, धन एवं प्रतिष्ठा का बंटवारा असमान होता है। इन तीनों अवधारणाओं के अर्थ को हमें समझना चाहिए।

16.2.1 शक्ति, धन और प्रतिष्ठा की परिभाषा

आपने राजनीतिक संस्थाओं के पाठ में पढ़ा होगा कि शक्ति का सम्बन्ध किसी भी व्यक्ति या समूह की वह क्षमता है, जिसके द्वारा व्यक्ति की इच्छा दूसरे लोगों पर लागू कर दी जाती है यद्यपि वे इसे स्वीकार करने के लिए राजी नहीं होते। जब शक्ति को लागू करना वैध होता है, तब इसे प्राधिकार कहते हैं। धन का तात्पर्य भौतिक वस्तुओं से है जैसे कि सम्पत्ति, पशुधन, भूमि, भवन, सम्पदा, हीरे - जवाहरात और सम्पत्ति के अन्य स्वरूप जो कई समाजों में मूल्यवान समझे जाते हैं। प्रतिष्ठा का मतलब सम्मान और आदर है, जिनका सरोकार सामाजिक स्थितियों से होता है, जो व्यक्तियों के पास होती है। इसका सम्बन्ध व्यक्तियों और उनकी जीवन पद्धति से जुड़ा होता है। कुछ गुण और जीवन पद्धति ऐसी होती हैं, जो दूसरों की तुलना में अधिक प्रतिष्ठित समझी जाती हैं। सामाजिक स्तरीकरण का सम्बन्ध शक्ति की गैर बराबरी, धन और प्रतिष्ठा से होता है।

16.2.2 सामाजिक स्तरीकरण एवं सामाजिक गैर बराबरी

अब तक आप समझ गये होंगे कि सामाजिक स्तरीकरण का सम्बन्ध सामाजिक गैर-बराबरी से है परन्तु क्या इसका सम्बन्ध सभी तरह की गैर-बराबरी से है?

सामाजिक गैर बराबरी का मतलब शक्ति, धन और प्रतिष्ठा जो व्यक्तियों में होती है, उससे है। ये गैर बराबरी लिंग और आयु वर्गों में भी है। यहां यह कहना चाहिए कि **गैर बराबरी सामाजिक स्तरीकरण** का मतलब सामाजिक गैर बराबरी से है लेकिन सभी गैर बराबरी पर यह लागू नहीं होता।

सामाजिक स्तरीकरण एक प्रकार की गैर बराबरी है। इसका मतलब यह है कि समूहों में शक्ति, धन और प्रतिष्ठा जो व्यक्तियों में है, उससे सरोकार है। यह सही है कि जिन लोगों के स्तर समान होते हैं उनके संवेग और हेतु भी समान होते हैं। सामान्यतया एक ही स्तर के लोग एक ही जीवन पद्धति के भागीदार होते हैं।

16.2.3 सामाजिक स्तरीकरण की सार्वभौमिकता

क्या सामाजिक स्तरीकरण सार्वभौमिक है? समाजशास्त्रियों का कहना है कि सरल समाजों जैसे कि शिकारी और खाद्य संग्राहक समूहों में श्रेणियां नहीं होती। समूह के स्तर पर इन समाजों में शक्ति, धन और प्रतिष्ठा को लेकर कोई अन्तर नहीं होता। सभी

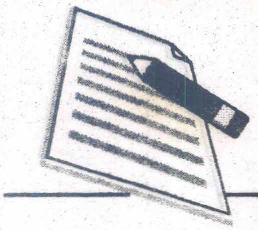

Notes

गोत्र बराबर होते हैं। उनमें कोई श्रेणियां नहीं होती। इन समुदायों के सभी सदस्य समान रूप से अपने स्रोतों का लाभ लेते हैं। परिणामस्वरूप इनमें न कोई गरीब होता है और न कोई धनवान। इनके बीच में जो गैर बराबरी होती है वह लिंग और उम्र के स्तर पर होती है। विभिन्न समाजों में पुरुष या स्त्री की कम या ज्यादा प्रतिष्ठा हो सकती है। वरिष्ठ लोगों का आदर किया जाता है। संघर्ष के मामले में जो हल ये वरिष्ठ लोग देते हैं, वह सब पर लागू नहीं होते। इतना होते हुए भी इन वरिष्ठ लोगों को आदर दिया जाता हैं और उनके निर्णय को स्वीकार किया जाता है। इसका अर्थ, यह निकला कि यद्यपि सामाजिक गैर बराबरी सभी समाजों में पायी जाती है पर सामाजिक स्तरीकरण सार्वभौमिक नहीं होता।

इसी कारण आज के समाजशास्त्री आदिम साम्यवाद (Primitive Communism) की विचारधारा को स्वीकार नहीं करते। पहले यह समझा जाता था कि आदिम समाज को सजातीय समझा जाता था। ये समाज साम्यवादी स्तर पर थे, अर्थात् गैर बराबरी का अभाव। अगर इस बयान को हम गहराई से देखें तो कहना पडेगा कि इन आदिम समाजों में यद्यपि स्तरीकरण का अभाव था फिर भी इनमें गैर बराबरी थी। इन समाजों में यह अवश्य होता था कि उनमें कुछ बहुत बढ़िया शिकारी थे, कुछ बहुत अच्छे दस्तकार थे, बहुत दक्ष जादूगर थे जिनको सम्मान और प्रतिष्ठा दी जाती थी। लेकिन इनमें कुछ शिकारी दूसरों से अच्छे थे। इस भांति जो अच्छे थे उन्हें अधिक प्रतिष्ठा मिलती थी। यहां ध्यान में रखने की बात यह है कि सरल समाजों में भी एक व्यक्ति का अधिक सम्मान हो सकता है और दूसरों की तुलना में अधिक धनवान हो सकता है लेकिन प्रतिष्ठा या धन अनिवार्य रूप से किसी समूह के साथ जुड़ा नहीं था। प्रतिष्ठा का जुड़ाव व्यक्ति के साथ था। इस तरह के विश्लेषण से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि स्तरीकरण समान विस्तार और समान अर्थों में सार्वभौमिक नहीं होता।

पाठगत प्रश्न 16.1

निम्न प्रश्नों का एक वाक्य में उत्तर दीजिए:

(अ) सामाजिक गैर बराबरी को परिभाषित कीजिए।

....

(ब) स्तरीकरण किसे कहते हैं?

....

(स) आदिम साम्यवाद की अवधारणा का वर्णन कीजिए।

....

(द) प्रतिष्ठा के पद को परिभाषित कीजिए।

....

16.3 स्तरीकरण के कुछ महत्वपूर्ण विचार और अवधारणाएं

इस भाग में हम सामाजिक स्तरीकरण के कतिपय दृष्टिकोणों को देखेंगे। इन दृष्टिकोणों को जर्मनी के विचारक कार्ल मार्क्स और मेक्सवेबर ने रखा।

16.3.1 कार्ल मार्क्स के विचार

सामाजिक स्तरीकरण पर कार्ल मार्क्स ने एक बुनियादी अवधारणा रखी है। उसके लिए स्तरीकरण समाज को दो पारस्परिक विरोधी श्रेणियों में बांटता है। इन्हें वर्ग कहते हैं। इन वर्गों में एक वर्ग दूसरे वर्ग का शोषण करता है। कार्ल मार्क्स की दृष्टि में समाज में दो मुख्य सामाजिक समूह हैं। पहला समूह वह है, जो स्त्रोतों (Resource) का मालिक और इन पर नियंत्रण रखता है। स्त्रोतों की तकनीकी और मूल्यवान वस्तुएं हैं इन्हें उत्पादन के साधन के नाम से जाना जाता है। दूसरा समूह उन लोगों का है जिनका न तो स्त्रोतों पर स्वामित्व है और न ही नियंत्रण। इस श्रेणी के लोग पहली श्रेणी के लोगों के लिए काम करते हैं, जिनके पास स्त्रोतों का मालिकाना अधिकार है। इनका जीवनयापन पगार पर होता है जिसे वे श्रम करके प्राप्त करते हैं। इन दोनों श्रेणियों के लिए मार्क्स ने वर्ग पद का प्रयोग किया है। अगर खुलासे से बात करें तो कहेंगे कि पहला वर्ग वह है जिसका उत्पादन के स्त्रोतों पर स्वामित्व है और दूसरे वर्ग का इन पर कोई अस्तित्व नहीं है। इस तरह वर्ग एक सामाजिक समूह है जिसके सदस्य उत्पादन के साधनों की समान भागीदारी करते हैं।

मार्क्स का कहना है जिनके पास उत्पादन के साधन हैं वे ही राजनीतिक शक्ति का उपयोग करते हैं। आर्थिक शक्ति आदमी को राजनीतिक और कानूनी शक्ति की ओर ले जाता है। इसके परिणामस्वरूप वह व्यक्ति को आर्थिक स्त्रोतों के कानूनी नियंत्रण की ओर ले जाता है। जिन लोगों के पास उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व है मार्क्स उन्हें शासक वर्ग (Ruling Class) कहते हैं। वह वर्ग जो स्त्रोतों का मालिक नहीं होता लेकिन उत्पादन के साधनों की तरह काम करता है उसे सेवा वर्ग (Service Class) कहते हैं। इस वर्ग की स्थिति अधीनस्थ वर्ग की होती है क्योंकि इसके पास राजनीतिक शक्ति नहीं होती। शासक वर्ग जिन नियमों को बनाता है उसके अन्तर्गत वह

शासक वर्ग की सुरक्षा और उसके हेतुओं को देखता है। मार्क्स की दृष्टि में कानून शोषण का एक साधन है। इसका कारण यह है कि इस कानून को शासक वर्ग बनाता है और वही इस पर नियंत्रण रखता है।

केवल यही नहीं कि स्रोतों का स्वामित्व राजनीतिक शक्ति देता है। ऐसा भी होता है कि स्रोतों का मालिकाना हक विशेषाधिकार की स्थिति देता है। और यह शासक वर्ग एक समय में जो समाज के प्रचलित विचार होते हैं लोगों को देता है। स्रोतों के स्वामी एक ऐसी विचारधारा पैदा करते हैं, जो इस सम्पूर्ण समूह को उच्च स्थान पर रख देता है। मार्क्स का कहना है कि एक समाज में जो विचारधारा होती है, वह प्रभुत्व वर्ग की होती है। यह वैचारिकी ऐसी होती है जो प्रभुत्व वर्ग की संरचना को वैधता देती है और इसी से वर्ग बनते हैं। वे लोग जो उत्पादन के साधनों पर नियंत्रण रखते हैं, एक लम्बे समय तक पीढ़ी दर पीढ़ी अपने नियंत्रण को बनाये रखते हैं। दूसरी ओर जो सेवा वर्ग के लोग हैं, लम्बे समय तक अपनी अधीनस्थ स्थिति में बने रहते हैं और यह तब तक चलता रहता है जब तक समाज में कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं आता।

मार्क्स का मानना है कि सभी समाज वर्गों में बंटें नहीं होते। उद्विकास की पहली अवस्था में मानव समाज में वर्ग का कोई अस्तित्व नहीं था। इस समाज में न तो कोई कानून था और न कोई राज्य। किसी भी समाज में व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं थी। ऐसे समाज में पूर्ण रूप से समानता थी और ऐसे समाज को आदिम साम्यवादी कहते थे। इस अवस्था के गुजर जाने के बाद वर्गों का वर्गीकरण आया। शासक वर्ग और सेवा वर्ग का उदय हुआ। मार्क्स के अनुसार, वर्ग की अंतिम अवस्था तब आयी जब इसमें पूंजीवाद आया और तब समाज में शासक वर्ग और सेवा वर्ग में संघर्ष हुआ। संघर्ष जिसे मार्क्स 'वर्ग संघर्ष' कहते हैं। समाज ऐसी अवस्था में पहुंच जाएगा, जब समाज में कोई वर्ग नहीं रहेंगे इस अवस्था को 'वर्गहीन समाज' कहते हैं। मार्क्सवादी संदर्भ में इसे 'साम्यवादी समाज' कहा जाता है। इस तरह मार्क्स के लिए समाज की विशेषता स्तरीकरण नहीं रहेगी और समाज अपने हजारों वर्ष पुरानी अवस्था में पहुंच जायगा जहां वर्ग नहीं थे।

16.3.2 मेक्स वेबर के विचार

कार्ल मार्क्स के बाद मेक्स वेबर का स्तरीकरण के विचारों पर महत्वपूर्ण योगदान है। जबकि कार्ल मार्क्स ने स्तरीकरण का मुख्य स्वरूप वर्ग को माना है, वेबर का सोचना है कि वर्ग के अतिरिक्त दो अन्य स्वरूप हैं - प्रस्थिति और शक्ति।

मार्क्स की तरह वेबर भी यह मानते हैं कि आर्थिक अर्थों में वर्ग ही महत्वपूर्ण

अवधारणा है लेकिन वेबर एक कदम और आगे बढ़ते हैं क्योंकि वे कहते हैं कि वर्गों का विकास बाजार अर्थव्यवस्था में है। इस भांति वर्ग पूंजीवादी समाजों का एक लक्षण है। क्योंकि इन समाजों में बाजार अर्थव्यवस्था है। पूंजीवाद में उत्पादन की इकाई परिवार नहीं होता। इन समाजों में बाजार उत्पादन और वितरण के कार्यों को ले लेता है। सभी प्रकार की वस्तुओं और सेवाओं के लिए लोग बाजार पर निर्भर हो जाते हैं।

लोग अपनी कार्यकुशलता को बाजार में बेचते हैं और अपना जीविकोपार्जन उस धन से करते हैं जिससे उन्हें आय होती है। कुछ खास तरह की कुशलताएं जैसे कि इंजीनियरिंग और तकनीकी और चिकित्सा से बाजार में दूसरे व्यवसायों की तुलना में अधिक धन मिलता है। जिन लोगों के पास ऐसी तकनीकी क्षमता होती है, उन्हें बाजार की कुशलता कहते हैं। अकुशल या अर्द्धकुशल लोगों की क्षमता उन लोगों की तुलना में जो कुशल हैं, कम है। उनके जीवित रहने की संभावना कम है।

सम्पत्ति पर भी यही सिद्धान्त लागू होता है। धन का लाभ इस बात से बदलता है कि यह सम्पत्ति किस स्थान पर मिलती है यहां तक की किस शहर या गांव में स्थापित है। बाजार भी धन के मूल्य को निर्धारित करता है। वेबर ने स्तरीकरण को जीवन के अवसर (life chances) की अवधारणा द्वारा समझाया है। सम्पत्ति बाजार की स्थिति से परिभाषित की जाती है। व्यक्ति में काम करने की जो कुशलता वह उस वर्ग को निर्धारित करती है और यह वर्ग बाजार निर्धारित करता है। वे लोग जिनके पास धन का कोई मालिकाना अधिकार नहीं है लेकिन जिनके पास ऐसी कुशलता है जिसको बाजार में जीवित रहने के कई अवसर हैं। इसलिए इन्हें गरीब नहीं कहा जा सकता है जैसे कि मार्क्स का सिद्धान्त कहता है। मेक्स वेबर ने शासक वर्ग की विचारधारा को अस्वीकार किया है।

- मार्क्स के अनुसार, वह वर्ग जिसके पास उत्पादन के साधन होते हैं, राजनीतिक शक्ति का नियंत्रण भी करते हैं।
- वेबर के अनुसार, उत्पादन के साधनों का स्वामित्व हमेशा राजनीतिक शक्ति का नियंत्रण करता हो, ऐसा नहीं है।
- लोगों को राजनीतिक शक्ति मिलती है, वह इसलिए नहीं कि उनके पास आर्थिक शक्ति है। इन्हें राजनीतिक कुशलता इसलिए मिलती है कि वे प्रभावपूर्ण ढंग से अपनी विचारधारा को दूसरों को दे सकते हैं। इस विचारधारा को वे घोषणा-पत्र, संगठनात्मक कुशलता और उद्देश्यों के प्रति प्रतिबद्धता के द्वारा बताते हैं।
- इस भांति आर्थिक शक्ति और राजनीति शक्ति आधुनिक समाज में एक साथ नहीं चलते।

- समाज में दो प्रकार की सोपानिक व्यवस्था होती है- आर्थिक और राजनीतिक। आर्थिक व्यवस्था में वे लोग हैं जिनके पास अपने स्वयं के उत्पादन के साधन ही हैं और राजनीतिक व्यवस्था में ऐसे लोग हैं जो राजनीतिक शक्ति को काम में लेते हैं।

पाठगत प्रश्न 16.2

निम्न में से सही व गलत कथन चुनिए:

(क) मार्क्स के अनुसार समाज में दो वर्ग होते हैं।

(ख) मार्क्स ने वर्गों को व्यक्तियों की मानसिक योग्यता के पद के रूप में परिभाषित किया है।

(ग) उत्पादन के साधनों में सम्मिलित होते हैं: तकनीकी, पूंजी और स्रोत।

(घ) मार्क्स के अनुसार, उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व राजनीतिक शक्ति की ओर ले जाता है।

(ड.) मानवजाति के प्रारम्भ से भी मानव समाज में वर्गों का अस्तित्व है।

16.4 प्रस्थिति

आर्थिक व राजनीतिक सोपानिक व्यवस्था के साथ-साथ एक अन्य सोपानिक व्यवस्था भी होती है, वह है प्रस्थिति। प्रस्थिति को अन्य दो सोपानों की तरह स्वतन्त्र रूप से भी विश्लेषित कर सकते हैं। *प्रस्थिति का पद 'सामाजिक पद' में अन्तर्निहित है।* अन्त:क्रिया की स्थिति में प्रत्येक व्यक्ति एक सामाजिक पद को धारण करता है। उदाहरण के लिए, अभी आपने एक पाठक के पद को धारण किया हुआ है जबकि मैं एक पाठ लेखक के पद को प्राप्त किए हुए हूं। आपने एक पुत्र के पद, भतीजा, पौत्र, विद्यार्थी, खिलाड़ी, मित्र तथा कुछ अन्य पदों को प्राप्त किया हुआ है। ये सभी सामाजिक स्थितियों पर निर्भर करते हैं जिसमें आप स्थित हैं। दूसरे शब्दों में, आप जिन व्यक्ति या व्यक्तियों से अन्त:क्रिया कर रहे हैं यह उस पर भी निर्भर है। प्रत्येक पद के साथ आप एक भूमिका करते हैं। इसका मतलब हुआ आप एक उस प्रकार की क्रिया करते हैं जो आपसे अपेक्षित है। इसलिए प्रस्थिति का मतलब पद से है और भूमिका वह व्यवहार है जो कि पद से अपेक्षित है।

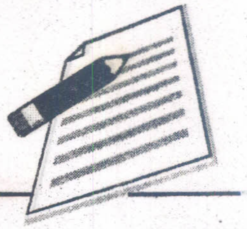

Notes

16.4.1 प्रदत्त और अर्जित प्रस्थितियां

समाजशास्त्री दो प्रकार की प्रस्थितियों के बारे में बात करते हैं। पहली प्रस्थिति प्रदत्त है और दूसरी अर्जित। *प्रदत्त प्रस्थिति वह है जो कि एक व्यक्ति को जन्म से मिलती है।* यह एक घटना मात्र है कि मेरा जन्म ब्राह्मण परिवार में हुआ है और इसलिए मैं ब्राह्मण हूं। अपनी इच्छा से मैं ब्राह्मण नहीं हूं। क्योंकि मेरा जन्म भगवान ने ब्राह्मण परिवार में किया है इसलिए मेरी प्रस्थिति ब्राह्मण की है। कुछ इसी तरह मेरे जन्म के कारण मैं स्त्री हूं। इसी लहजे में मुझे पत्नी, माता, चाची और दादी की प्रस्थिति निभानी पड़ती है। इस भांति मुझे किसी परिवार में जन्म लेना, किसी कोटि में आना, पुरुष या स्त्री बनना प्रदत्त प्रस्थितियां हैं। इन्हें बदला नहीं जा सकता। जब एक व्यक्ति जन्म के कारण किसी प्रस्थिति को प्राप्त कर लेता है, जैसे कि लिंग के बाद में चलकर जिस सामाजिक पद को वह अपनाता है उसके भविष्य के स्वरूप को बताया जा सकता है। एक व्यक्ति अगर पुरुष पैदा हुआ है, तो हम यह सरलता से कह सकते हैं कि वह लड़का, पति, चाचा, दादा या इसी तरह की अन्यान्य प्रस्थितियां बदलेंगी।

दूसरी सामाजिक प्रस्थिति को अर्जित प्रस्थिति कहते हैं। प्रत्येक समाज में कुछ प्रस्थितियां ऐसी हैं, जिन्हें प्रतियोगिता द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। इस तरह सामाजिक पद के लिए जो प्रतियोगिता की जाती है वह अर्जित प्रस्थिति है। अगर एक व्यक्ति सिविल सेवा परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाता है और सिविल अधिकारी की तरह जो पद प्राप्त करता है वह अर्जित प्रस्थिति है। एक सामान्य समाज में सामाजिक प्रस्थितियां मुख्य रूप से प्रदत्त हैं। लेकिन कुछ सामाजिक प्रस्थितियां ऐसी हैं, जो प्रतियोगिता द्वारा भरी जाती हैं। उदाहरण के लिए, 'सबसे बढ़िया शिकारी', 'सबसे बढ़िया दस्तकार', व 'बागवान' आदि प्रदत्त प्रस्थितियों के दृष्टान्त हैं। तुलनात्मक दृष्टि से एक जटिल समाज में सामाजिक प्रस्थितियां मुख्यतया अर्जित होती हैं। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि प्रदत्त प्रस्थितियां ओझल हो जाती हैं। वास्तविकता यह है कि अर्जित प्रस्थितियां कई स्थितियों में महत्वपूर्ण होती हैं। देखा यह गया है कि प्रदत्त प्रस्थितियां अक्सर अर्जित प्रस्थितियों को प्रभावित करती हैं। कई समाजों में पुरुषों के कई विशेषाधिकार होते हैं। आदमी को स्त्री की तुलना में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के अधिक अवसर प्राप्त होते हैं। इस तरह स्त्रियों की तुलना में पुरुषों को कतिपय प्रस्थितियों को प्राप्त करने के अधिक अवसर होते हैं।

प्रस्थितियों को श्रेणियों में बांटा जाता है। श्रेणियों का यह बंटवारा सिद्धान्तों पर होता है और ये सिद्धान्त एक समाज से दूसरे में बदल जाते हैं। अपनी जीवन पद्धति को लेकर एक प्रस्थिति समूह से दूसरे प्रस्थिति समूह में अन्तर किया जा सकता है। प्रस्थिति समूह का महत्वपूर्ण दृष्टान्त जाति समूह है।

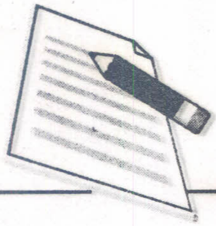

Notes

पाठगत प्रश्न 16.3

रिक्त स्थानों की पूर्ति सामने दिये शब्दों में उपयुक्त शब्द छांटकर कीजिए:

(क) प्रस्थिति का सामाजिक ....के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। (पद, क्रिया और व्यवहार)

(ख) भूमिका का मतलब है .... (व्यवहार, स्थिति और व्यक्ति)

(ग) प्रस्थिति जो जन्म से प्राप्त की जाती है उसे ....प्रस्थिति कहते हैं। (प्रदत्त, उच्च, भिन्न)

(घ) .... समाजों में अर्जित प्रस्थितियां अधिक पाई जाती हैं। (जटिल, सरल, संयुक्त)

(ड.) पुत्र की प्रस्थिति एक .... प्रस्थिति का उदाहरण है। (अर्जित, प्रदत्त, दोनों)

16.5 जाति

हमने प्रारम्भ में कहा है कि प्रस्थिति का वर्ग और शक्ति से कोई सम्बन्ध नहीं है।यह अवश्य है कि सामाजिक स्थिति का एक सोपान होता है और प्रत्येक स्थिति की उसके सदस्यों की जीवन पद्धति के आधार पर परिभाषा होती है। एक गरीब ब्राह्मण का सम्मान एक राजनीतिक दृष्टि से शक्तिशाली व्यक्ति या धनवान व्यापारी से ज्यादा हो सकता है। राजा और व्यापारी दोनों ही उसके चरणों को छूते हैं और उससे आशीर्वाद मांगते हैं। एक नया राजा अपने सिंहासन पर तब तक नहीं बैठ सकता जब तक कि ब्राह्मण उसके सिंहासन पर बैठने के कर्मकाण्ड को पूरा नहीं कर लेता। हिन्दू कानून और धर्म के अनुसार, सभी मामलों में ब्राह्मण पुरोहित की सलाह मांगी जाती है। ब्राह्मणों को समाज के विद्वान वर्ग में समझा जाता है। उसकी विशिष्टता धार्मिक मामलों और कर्मकाण्ड के सम्पादन में महत्वपूर्ण समझी जाती है। यह दृष्टान्त इस बात को बताता है कि हिन्दुओं में श्रेणीकरण की व्यवस्था ऐसी है जिसमें ब्राह्मण का स्थान सबसे ऊपर होता है और यह आर्थिक, राजनीतिक शक्ति से स्वतन्त्र होती है।

भारतीय समाज की विशेषता उसकी जाति-व्यवस्था है। लेकिन यह व्यवस्था दक्षिण एशिया के कई अन्य भागों में भी पायी जाती है। यद्यपि जाति एक ऐसा रास्ता है जिसके आधार पर हिन्दू अपने समाज को संगठित करते हैं, फिर भी जाति के तत्व गैर-हिन्दू समुदायों में भी पाए जाते हैं। वे धार्मिक सम्प्रदाय जिनका उदय जातियों की

गैर बराबरी की प्रतिक्रिया के कारण हुआ है वे अपने सदस्यों को जातियों के व्यवहार सहन करने की इजाजत देते हैं। इसके परिणामस्वरूप जातियां मुसलमानों, इसाइयों, सिख, जैन, यहूदी और पारसी में भी पायी जाती हैं। इनके अतिरिक्त बहुत से आदिम समुदाय जाति व्यवस्था में सम्मिलित हो गये हैं। इस प्रक्रिया को आदिवासी-जाति नैरन्तर्य कहते हैं। इसका मतलब हुआ कुछ आदिवासी एक समयावधि में पहुंचकर जातियां बन जाती हैं।

जाति व्यवस्था का आधार हिन्दू धर्म है। हिन्दू ग्रन्थ बताते हैं कि ऋग्वेद के अनुसार, जातियों में जो अन्तर आया है वह ईश्वर के शरीर के विभिन्न भागों से आया है। ब्रह्मा के मुख से ब्राह्मण पैदा हुए हैं, उसकी भुजाओं से क्षत्रिय, उसकी जंघाओं से वैश्य और उसके चरणों से शूद्र पैदा हुए हैं। इसलिए हिन्दू समाज चार श्रेणियों में बंटा हुआ है, जिन्हें वर्ण कहते हैं और प्रत्येक वर्ण से यह आशा की जाती है कि वह किसी एक व्यवसाय को करेगा। ब्राह्मण कर्मकाण्ड करते हैं, वे धार्मिक ग्रंथों को पढ़ते हैं और उन पर टिप्पणी लिखते हैं। क्षत्रिय योद्धा जाति है। बाहरी आक्रमणों से योद्धा रक्षा करते हैं। वैश्य व्यवसाय में विशिष्टता रखते हैं। इस सोपान व्यवस्था में सबसे नीचे शूद्र होते हैं। शूद्रों का सबसे बड़ा काम ऊँची जातियों की सेवा करना है। प्रत्येक सामाजिक श्रेणी आगे चलकर छोटी श्रेणियों में बंट जाती है।

हम जाति व्यवस्था के कुछ मुख्य लक्षणों को नीचे दे रहे हैं। ये सब लक्षण आपस में जुड़े हुए हैं:

- जाति व्यवस्था का आधार पवित्र-अपवित्र संवंधी विचारों पर निर्भर है।
- व्यवसाय के अतिरिक्त प्रत्येक जाति की अपनी एक जीवन पद्धति होती है।
- गाव में एक आदमी की जाति को उसकी वेशभूषा, जवाहरात, मकान का प्रकार, भोजन की आदतें और बोलने के तरीके पर पहचाना जा सकता है।
- यह हमें ज्ञात हुआ है कि प्रत्येक जाति की अपनी एक बोली होती है जो दूसरों से भिन्न होती है।
- प्रत्येक जाति अपने अन्तर्विवाह के नियमों का पालन करती है। इसका अर्थ यह हुआ कि एक जाति का सदस्य अपनी जाति में ही विवाह करता है, लेकिन वह अपने गांव से बाहर विवाह करता है। इसे गांव बहिर्विवाह कहते हैं। जाति के अन्तर्विवाह के साथ में बहिर्विवाह भी जुड़ा हुआ है।
- प्रत्येक जाति की अपनी एक कोंसिल होती है। स्थानीय स्तर पर इसे जाति पंचायत कहते हैं। यह पंचायत जाति के झगड़े और अन्य मसलों पर विचार करती है।

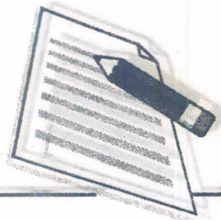

Notes

- प्रत्येक जाति के देवी-देवताओं का एक जटिल संगठन होता है जिसमें जटिल कर्मकाण्ड और जनरीतियां होती हैं।

जाति के उपरोक्त लक्षण, उसकी प्रकृति, उसके तत्व एक आदर्श रूप हैं। यदि आज हम जाति को देखें तो इसके बहुत से पवित्र कहे जाने वाले लक्षण मानवतावादी मूल्यों और आधुनिकता के लक्षणों के कारण अपनी पवित्रता खो बैठते हैं। शहरीकरण और संचार ने अन्तर्जाति पूर्वाग्रह की कठोरता को कम कर दिया है।

जाति के सदस्य जिन लक्षणों की भागीदारी करते हैं, वे ही लक्षण जाति की एकता को बनाये रखते हैं।

हमें यह धारणा नहीं बनानी चाहिए कि प्रत्येक जाति स्वायत्त है। जिस तरह से आदिवासी समाज पृथक हैं, वैसे प्रत्येक जाति पृथक नहीं है। एक जाति अपने कर्मों के लिए दूसरी जाति और जातियों पर निर्भर है। गांव में जो हमें एकता दिखायी देती है वह अर्न्तजातीय निर्भरता के कारण है। यह इसलिए कि प्रत्येक जाति एक विशेष व्यवसाय में पारंगत होती है और तभी परस्पर निर्भर रहना पड़ता है।

जाति के उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि जन्म से जुड़े हुए कारक जाति को निर्धारित करते हैं। इस कारण जाति को बदला नहीं जा सकता। लेकिन यह कथन सही नहीं है। प्राचीन काल से हम देखते आ रहे हैं कि एक जाति अपने सोपान से ऊपर उठना चाहती है। इस प्रक्रिया को ऊर्ध्वगामी गतिशीलता कहते हैं। छोटी जातियां अपनी जीवन पद्धति को बदलकर उच्च जातियों की दिशा की ओर बदलती हैं, इस प्रक्रिया को सांस्कृतीकरण कहते हैं।

16.5.1 जाति और वर्ग

जाति वर्ग से भिन्न है। वर्ग की परिभाषा आर्थिक अवधारणाओं में की जाती है। दूसरी और जाति एक वंशानुगत इकाई समझी जाती है। इसे जीवन पद्धति के रूप में देखा जाता है। एक व्यक्ति का जन्म वर्ग में होता है लेकिन वह अपने वर्ग को बदलने का अवसर अवश्य पाता है। वर्ग और जाति की तुलना करें तो सैद्धान्तिक रूप से कहा जाना चाहिए कि जाति में व्यक्ति की स्थिति या स्थान पक्का होता है, जब तक कि पूरी जाति आगे बढ़ने का प्रयास नहीं करती। इसी कारण समाजशास्त्री कहते हैं कि जाति व्यवस्था एक बन्द व्यवस्था है। तुलनात्मक रूप से देखें तो वर्ग एक खुली व्यवस्था है और इसका कारण यह है कि व्यक्ति अपने वर्ग से ऊपर उठ सकता है। वह कठिन परिश्रम करके नये रास्ते निकाल के अपनी आर्थिक दशा को सुधार सकता है और निम्न वर्ग से ऊपर उठकर मध्यम वर्ग और उससे ऊपर पहुंच सकता है।

यहां हमें यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि जाति व्यवस्था की वैधता धर्म से है। वर्ग की वैधता ऐसी नहीं है। जाति का आधार पवित्रता और अपवित्रता है जो यह मानकर चलता है कि एक व्यक्ति का जन्म अमुक जाति में इसलिए हुआ है कि उसने पिछले जन्म में कुछ पुण्य किये हैं। ब्राह्मण कर्मकाण्ड की दृष्टि से सबसे अधिक पवित्र हैं और इसलिए वे सोपान में सबसे ऊपर हैं और इस सोपानिक व्यवस्था में वे लोग हैं, जो धार्मिक दृष्टि से न्यूनतम पवित्र हैं। जैसे ही हम जाति की सोपानिक व्यवस्था को देखते हैं, तब पवित्रता घटती जाती है और अपवित्रता बढ़ती जाती है। कुछ समाजशास्त्रियों के विचार से जाति व्यवस्था में छुआछूत पायी जाती है। इसे 1955 में कानूनी ढंग से समाप्त कर दिया गया। स्तरीकरण की किसी भी व्यवस्था में अब इस तरह का व्यवहार देखने को नहीं मिलता।

16.5.2 अर्वाचीन भारत में जाति का महत्व

अर्वाचीन भारत में वर्ग व्यवस्था बड़ी महत्वपूर्ण हो गयी है। लेकिन इसका निष्कर्ष हमें यह नहीं निकालना चाहिए कि जाति अप्रासंगिक हो गयी है। इसके अप्रासंगिक न होने के निम्न कारण हैं:

- बहुत से अध्ययन बताते हैं कि जाति विवाह के मसलों में महत्वपूर्ण है।
- लोग जिन कर्मकाण्डों को करते हैं, उनका विशेष रूप से उल्लेख जातियां करती हैं।
- जाति के नाम पर समितियां बनायी जाती हैं।
- जातियों की समितियां अपना बैंक, स्कूल, कॉलेज, विश्राम गृह, अस्पताल, आदि अपनी जाति के नाम पर स्थापित करते हैं।
- राजनीति के क्षेत्र में मतदान करने में जाति एक महत्वपूर्ण कारक है।
- एक जाति के सदस्य वोट बैंक को बनाते हैं।

पाठगत प्रश्न 16.4

निम्न कथनों के आधार पर बताइए कि कौन सा कथन सही है एवं गलत है। सही कथन के आगे सही और गलत के लिए गलत लिखिए।

(क) जाति एक प्रस्थिति समूह है।

(ख) जाति बुनियादी रूप से अर्जित प्रस्थिति समूह है।

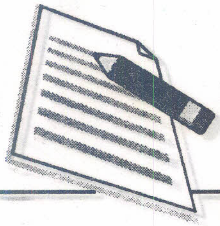

Notes

(ग) जाति विश्व के सभी भागों में पायी जाती हैं।

(घ) जाति और वर्ग का तात्पर्य एक ही सामाजिक श्रेणी से है।

(ङ.) भारत में छुआछूत समाप्त कर दी गई है।

(च) सांस्कृतीकरण ऊर्ध्वगामी गतिशीलता की एक प्रक्रिया है जो जाति व्यवस्था में पायी जाती है।

(छ) जातियां गैर हिन्दू समुदायों में भी पायी जाती हैं।

(ज) क्षत्रियों को व्यापारी जातियों के सदस्यों की तरह जाना जाता है।

(झ) जातियों की सोपानिक व्यवस्था के निचले भागों में जिन सदस्यों को रखा जाता है, वे शूद्र कहलाते हैं।

(ञ) सामाजिक स्तरीकरण की खुली व्यवस्था जाति है।

आपने क्या सीखा

- सामाजिक गैर बराबरी सार्वभौमिक है।
- सामाजिक स्तरीकरण की परिभाषा समाज में पाये जाने वाले श्रम विभाजन से है, इस श्रम विभाजन में परत होती है जिनकी श्रेणीबद्धता विशेष अधिकार और स्त्रोतों के माध्यम से की जाती है।
- सामाजिक स्तरीकरण का मतलब सामाजिक गैर बराबरी से है, लेकिन इसमें सभी प्रकार की गैर बराबरी नहीं होती।
- लैंगिक और उम्र की गैर बराबरी स्तरीकरण की गैर बराबरी नहीं है।
- कार्ल मार्क्स का कहना था कि समाज का बुनियादी विभाजन वर्गों में है।
- मेक्स वेबर ने मार्क्स की अवधारणा को सही करते हुए कहा कि वर्ग के अतिरिक्त प्रतिष्ठा और शक्ति भी स्तरीकरण के अन्य सिद्धान्त हैं।
- प्रतिष्ठा समूह का सुन्दर दृष्टान्त जाति है।
- जाति का आधार हिन्दू धर्म है।
- जाति पवित्र और अपवित्र धारणा पर आधारित है।
- जातियां आर्थिक इकाइयां हैं।
- आधुनिक भारत में जातियां महत्वपूर्ण हो गयी हैं लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि जातियों का आज महत्व कम हो गया है।

पाठान्त प्रश्न

1. क्या सामाजिक स्तरीकरण सार्वभौमिक है? व्याख्या कीजिए।
2. अपने शब्दों में 'प्रदत्त' और 'अर्जित' प्रस्थिति को कुछ उदाहरणों सहित समझाइए।
3. जाति की मुख्य विशेषताएं कौन-कौन सी हैं?
4. किस प्रकार जाति वर्ग से भिन्न है? समझाइए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

16.1

1. दूसरों की तुलना में कुछ लोग प्रतिष्ठा और स्रोत रखते हैं, इसका परिणाम यह है कि कुछ लोग व समूहों की श्रेणियां गैर बराबरी को जन्म देती हैं।
2. समाज का विभाजन विभिन्न परतों तथा स्तरों में होता है।
3. सरल समाजों में राज्य सम्पूर्ण बराबरी रखता है।
4. जो व्यक्ति किन्हीं क्षेत्रों में श्रेष्ठ होते हैं, वे अपनी प्रतिष्ठा पृथक रखते हैं तथा वे अन्य की तुलना में प्रतिष्ठित व धनवान होते हैं।

16.2

(क) सही (ख) गलत (ग) सही (घ) सही (ड.) गलत

16.3

(क) पद (ख) व्यवहार (ग) प्रदत्त (घ) जटिल (ड.) प्रदत्त

16.4

(क) सही (ख) गलत (ग) गलत (घ) गलत (ड.) सही

(च) सही (छ) सही (ज) गलत (झ) सही (ञ) गलत

एनआईओएस द्वारा जीते गए पुरस्कार

उत्कृष्ट वेब सामग्री के लिए सूचना और सेवाओं को प्रचार-प्रसार हेतु, सूचना प्रौद्योगिकी विभाग, संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय तथा नेशनल इंफॉरमेटिक सेंटर (एनआईसी),, भारत सरकार द्वारा स्थापित **वेब रत्न पुरस्कार 2012 प्लेटिनम आइकन ई-शासन के क्षेत्र में** अनुकरणीय कार्यों के सम्मान में दिया गया। यह पुरस्कार माननीय श्री कपिल सिबल, संचार एवं प्रौद्योगिकी मंत्री जी ने 10 दिसंबर, 2012 को डॉ. डी.एस. कोठारी, ऑडिटोरियम, डीआरडीओ भवन, डलहौजी रोड, नई दिल्ली में प्रदान किया।

टीओआई सोशल इम्पैक्ट अवार्ड 2012:

एनआईओएस को जे.पी. मॉर्गन की भागीदारी में टाइम्स ऑफ इंडिया द्वारा संस्थापित सोशल इम्पैक्ट अवार्ड 2012 के विजेता के रूप में चुना गया। यह पुरस्कार वैयक्तिक या समूहों या संस्थानों द्वारा शिक्षा सहित विभिन्न क्षेत्रों में समाज में प्रभाव डालने के लिए किए गए प्रशसंनीय कार्य की पहचान में दिया गया। एनआईओएस यह पुरस्कार प्राप्त कर गौरवान्वित हुआ।

यह पुरस्कार 28 जनवरी, 2013 को एक समारोह में भारत के राष्ट्रपति और उच्च स्तरीय पदाधिकारियों की उपस्थिति में दिया गया।

अक्षम व्यक्तियों के सशक्तिकरण के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार 2012

एनआईओएस ने सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा संस्थापित अक्षमों को समर्थ बनाने के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार, 2012 प्राप्त किया। एनआईओएस को यह पुरस्कार अपनी वेबसाइट www.nios.ac.in को अक्षम व्यक्तियों के लिए सर्वोत्तम अधिगम्य वेबसाइट बनाने की श्रेणी के अंतर्गत प्राप्त हुआ। वेबसाइट हिंदी और अंग्रेजी में द्विभाषी है। इसकी वेबसाइट में अक्षम शिक्षार्थियों के लिए स्क्रीन रीडर, टैक्स्ट के आकार को बढ़ाने और कलर कन्ट्रास्ट इत्यादि का भी प्रावधान है। **यह पुरस्कार माननीय राष्ट्रपति, भारत ने 6 फरवरी, 2013 को विज्ञान भवन, नई दिल्ली में प्रदान किया गया।** डॉ. एस.एस. जेना, अध्यक्ष, एनआईओएस ने यह पुरस्कार ग्रहण किया।